वली मोहम्मद (मृतक) जरीये विधिक प्रतिनिधि

बनाम

राम सूरत और अन्य

सितंबर 21, 1989

[एम. एच. कानिया और एस. रंगनाथन, जे. जे.]

यू. पी. जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम 1950-धारा 232 और धारा 20 (बी) (आई)- व्याख्या की गई कि इसके तहत किसे आदिवासी घोषित किया जा सकता है।

एक वली मोहम्मद (मृतक) ने 22 मई, 1928 को राम कुमार और शिव कुमार के पक्ष में दो भूखंडों के संबंध में एक फलोपयोगी बंधक निष्पादित किया। वली मोहम्मद के अनुसार उन्होंने उक्त बंधक को उन्मोचित करा लिया और फसली वर्ष 1354 (1.7.1946 से 30.6.1947 तक की अवधि) की शुरुआत में भूखंडों पर कब्जा प्राप्त कर लिया और कब्जे में निरन्तर में बने रहे। 28 दिसंबर 1953 को राम कुमार ने यू. पी. जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम, 1950 की धारा 232 के तहत वली मोहम्मद से विचाराधीन दोनों भूखंडों का कब्जा इस आधार पर प्राप्त करने के लिए एक आवेदन दायर किया कि ये भूखंड 1356 फसली की खसरा व खतौनी में उसके नाम पर दर्ज है और इसलिए वह उक्त भूखण्डों का आदिवासी है। वली मोहम्मद ने उपखण्ड अधिकारी के समक्ष इस आवेदन का विरोध किया। उप-खण्ड अधिकारी ने मुकदमे को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि वली मोहम्मद के कब्जे में उक्त भूखंड थे। इस निर्णय की पुष्टि अतिरिक्त आयुक्त ने भी की, जिनका मानना था कि राम कुमार द्वारा जिस खसरा प्रविष्ठि पर भरोसा किया गया था वह काल्पनिक थी। दूसरी अपील पर राजस्व बोर्ड ने उप-मंडल अधिकारी और अतिरिक्त आयुक्त के आदेशों को रद्द कर दिया।

बोर्ड ने माना कि फसली वर्ष 1356 में दोनों भूखंडों पर राम कुमार का कब्जा होने के प्रभाव से खसरा में हुई प्रविष्ठि आदिवासी अधिकारों को प्रदान करने के लिए पर्याप्त था। इसके बाद वली मोहम्मद ने राजस्व बोर्ड के निर्णय को चुनौती देने के लिए उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की। रिट याचिका की सुनवाई करने वाले एकल न्यायाधीश ने रिट याचिका की अनुमति देते हुए कहा कि बोर्ड ने अधिकार क्षेत्र की त्रुटि की थी और इसके परिणामस्वरूप बोर्ड के आदेशों को रद्द कर दिया। राम कुमार ने एकल न्यायाधीश के आदेश के खिलाफ लेटर पेटेंट अपील को प्राथमिकता दी। डिवीजन बेंच ने अपील को स्वीकार कर लिया और एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया। डिवीजन बेंच ने यह विचार रखा कि राजस्व रिकॉर्ड में प्रविष्टि अधिनियम की धारा 20 (बी) के तहत आदिवासियों के अधिकारों को प्रदान करने के लिए पर्याप्त थी।

उच्च न्यायालय के उक्त निर्णय से व्यथित होने के कारण वली मोहम्मद, जिनकी मृत्यु हो चुकी है, के विधिक प्रतिनिधियों ने विशेष अनुमति प्राप्त करने के बाद यह अपील दायर की है।

अपील को खारिज करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया-

अधिनियम की धारा 20 (बी) इस सवाल से संबंधित है कि कौन प्रश्नगत भूखंडों के कब्जे को लेने या बनाये रखने का अधिकारी है? अधिनियम की धारा 20 की उप-धारा (बी) के खण्ड (1) की सामान्य भाषा में इस प्रश्न का निर्धारण फसली वर्ष 1356 के खसरा या खतौनी में प्रविष्टि के आधार पर किया जाना है। उक्त धारा का विश्लेषण करने से पता चलता है कि धारा 20 की उप-धारा (बी) के तहत, फसली वर्ष 1356 के खतौनी के खसरा में प्रविष्टि उस व्यक्ति के बारे में प्रश्न का निर्धारण करेगी जो भूमि पर कब्जा करने या बनाए रखने का हकदार है। यदि प्रविष्टि काल्पनिक है या गुप्त रूप से की गई पाई जाती है तो इसका कोई कानूनी प्रभाव नहीं हो सकता है क्योंकि इसे

कानून में कोई प्रविष्टि नहीं माना जा सकता है, लेकिन केवल इसलिए कि प्रविष्टि गलत तरीके से की गई है जिससे यह निष्कर्ष नहीं निकलेगा कि यह प्रविष्टि नहीं है। यह संभव है कि उक्त प्रविष्टि को उचित कार्यवाही में अलग रखा जाए। [214 जी-एच; 215 ए)

वर्तमान मामले में, हालांकि अतिरिक्त आयुक्त ने कहा है कि ऐसा लगता है कि प्रविष्टि काल्पनिक थी, निष्कर्ष केवल इस आधार पर निकाला गया था कि वली मोहम्मद फसली वर्ष 1356 में कब्जे में थे, जिसके परिणामस्वरूप खसरा या खतौनी में प्रविष्टि में राम कुमार को रहने वाले के रूप में दिखाया जाना सही नहीं हो सकता है। वली मोहम्मद की ओर यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि उक्त प्रविष्टि काल्पनिक थी या धोखाधड़ी से की गई थी। इन परिस्थितियों में, प्रविष्टि गलत हो सकती है लेकिन लेकिन इसे काल्पनिक नहीं कहा जा सकता है या गैर-वास्तविक नहीं माना जा सकता है। उक्त अधिनियम की धारा 20 (ख) के प्रावधानों के तहत भूमि का आदिवासी घोषित किया गया। [216 बी-डी]

बचन और अन्य बनाम कंकर और अन्य, [1973] 1 एससीआर 727 और विश्व विजय भारती बनाम फखरूल हसन और अन्य, [1976] पूरक एससीआर 519, संदर्भित।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं. 1443/1972

इलाहबाद उच्च न्यायालय की विशेष अपील संख्या 491/1963 में पारित निर्णय और आदेश दिनांकित 30.11.1971 से।

अपीलार्थियों के लिए उमा दत्त।

प्रत्यर्थियों के लिए रचना गुप्ता (बग्गा की ओर से)

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

कनिया, जे.

हमारे सामने अपीलकर्ता वली मोहम्मद के उत्तराधिकारी और कानूनी प्रतिनिधि हैं। उत्तरदाता संख्या 1 और 2 एक राम कुमार के बेटे हैं। प्रत्यर्थी संख्या 3 राजस्व बोर्ड, इलाहाबाद है।

22 मई, 1928 को वली मोहम्मद ने दो भूखंडों के संबंध में राम कुमार और शिव कुमार के पक्ष में एक फलोपयोगी बंधक का निष्पादन किया। वली मोहम्मद के अनुसार, उन्होंने उक्त बंधक फसली वर्ष 1354 में (1.7.1946 से 30.6.1947 तक की अवधि) को छुड़ा लिया और शुरुआत में उक्त भूखंडों पर कब्जा कर लिया व कब्जे में बना रहा। 28 दिसंबर, 1953 को राम कुमार ने उत्तर प्रदेश, जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम, 1950 (जिसे बाद में "उक्त अधिनियम" के रूप में संदर्भित किया गया) की धारा 232 के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसका आधार यह था कि वली मोहम्मद से उक्त दोनों भूखंडों का कब्जा इस आधार पर प्राप्त कर लिया कि उनका नाम 1356 फसली के खसरा और खतौनी में दर्ज किया गया था और इसलिए, वह उक्त भूखंडों का आदिवासी था। इसका विरोध वली मोहम्मद ने किया था। उप-मंडल अधिकारी ने पाया कि उक्त बंधक के पुनर्निर्धारण के बाद से उक्त भूखंडों पर वली मोहम्मद का कब्जा था और राम कुमार के मुकदमे को खारिज कर दिया। उस निर्णय की पुष्टि अतिरिक्त आयुक्त द्वारा अपील पर की गई थी, जिसमें कहा गया था कि राम कुमार द्वारा जिस खसरा प्रविष्ठि पर भरोसा किया गया था वह काल्पनिक थी। दूसरी अपील पर, राजस्व बोर्ड ने उप-मंडल अधिकारी और अतिरिक्त आयुक्त के फैसले को दरकिनार कर दिया और कहा कि खसरा में इस आशय की प्रविष्ठि कि राम कुमार फसली वर्ष 1356 के खसरा में उक्त भूखंडों के अधिभोगदार थे, उन्हें आदिवासी अधिकार प्रदान करने के लिए पर्याप्त था और यह पता लगाने के लिए कि उक्त प्रविष्टि सही थी या गलत, आगे कोई जांच नहीं की गई थी। वली मोहम्मद ने राजस्व बोर्ड के उपरोक्त फैसले को चुनौती देते हुए इलाहाबाद उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की।

उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने उक्त रिट याचिका में दलीलें सुनने के बाद इसकी अनुमति दी और राजस्व बोर्ड के आदेश को इस आधार पर रद्द कर दिया कि राजस्व बोर्ड ने अधिकार क्षेत्र की त्रुटि की थी। राम कुमार ने विद्वान एकल न्यायाधीश के उक्त निर्णय के खिलाफ लेटर्स पेटेंट अपील को प्राथमिकता दी। उक्त अपील को उक्त उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ ने स्वीकार कर लिया था। डिवीजन बेंच ने विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को दरकिनार करते हुए कहा कि राजस्व रिकॉर्ड में प्रविष्टि उक्त अधिनियम की धारा 20 (बी) के तहत आदिवासियों को अधिकार प्रदान करने के लिए पर्याप्त थी। वली मोहम्मद के आवेदन पर दी गई विशेष अनुमति द्वारा इस अपील में उस निर्णय को हमारे सामने चुनौती दी गई है। वली मोहम्मद की मृत्यु हो गई। वर्तमान अपील के लंबित रहने के दौरान और उसके स्थान पर उसके उत्तराधिकारियों और कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड में लाया गया है।

सुसंगत प्रावधान जो विचार के लिए आता है वह उक्त अधिनियम की धारा 20 की उप-धारा (बी) का खंड (i) है। धारा 20 का प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः

"20. प्रत्येक व्यक्ति जो

(क) x x x

(ख) रहवासी के रूप में दर्ज किया गया,

(i) उपवन भूमि या किसी ऐसी अन्य भूमि का, जिस पर धारा 16 लागू नहीं होती है या ऐसी भूमि जो उत्तर प्रदेश भूमि किरायेदारी (संशोधित) अधिनियम, 1947 की धारा 27 की उप-धारा (3) के परंतुक में 1356 एफ. के खसरा या खतौनी में निर्दिष्ट है और की उत्तर प्रदेश भू राजस्व अधिनियम, 1901 (यु.पी. एक्ट III of 1901) की धारा 28 और 33 के तहत बनाया गया है या संयुक्त प्रांत भूमि किरायेदारी (संशोधन) अधिनियम,

1947 (1947 का यू. पी. अधिनियम-X) के तहत जो धारा 27 की उपधारा (3)के खण्ड ग के तहत लागू होने की दिनांक के तत्काल समय कब्जे में था, या

(ii) x x x

जब तक कि वह भूमि का भूमिधर नहीं बन गया है धारा 18 की उप-धारा (2) या खंड (एच) के तहत एक असामी धारा 21 को भूमि का आदिवासी कहा जाएगा और, इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन, लेने का अधिकार होगा या उस पर अधिकार बनाए रखें।

उक्त खंड इस प्रश्न से संबंधित है कि विचाराधीन भूमि पर कब्जा करने या बनाए रखने का कौन हकदार है। उक्त अधिनियम की धारा 20 की उप-धारा (बी) के उपरोक्त खंड (आई) की साधारण भाषा से यह पता चलता है कि इस प्रश्न का निर्धारण निम्नलिखित आधार पर किया जाना चाहिएः

उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम, 1901 की धारा 28 और 33 के तहत तैयार 1356 फसली वर्ष के खसरा या खतौनी में प्रविष्टि। उक्त धारा के विश्लेषण से पता चलता है कि धारा 20 की उप-धारा (बी) के तहत फसली वर्ष 1356 के खसरा या खतौनी में प्रविष्टि उस व्यक्ति के बारे में प्रश्न का निर्धारण करेगी जो लेने का हकदार है या भूमि पर अधिकार बनाए रखेगा। यह निश्चित रूप से सच है कि यदि प्रविष्टि काल्पनिक है या गुप्त रूप से की गई है तो इसका कोई कानूनी प्रभाव नहीं हो सकता है क्योंकि इसे कानून में कोई प्रविष्टि नहीं माना जा सकता है, लेकिन केवल इसलिए कि कोई प्रविष्टि गलत तरीके से की गई है जिससे यह निष्कर्ष नहीं निकलेगा कि यह प्रविष्टि नहीं है। यह संभव है कि उक्त प्रविष्टि को उचित कार्यवाहियों में अलग रखा जा सकता है, लेकिन एक बार जब प्रविष्टि फसली वर्ष 1356 के खसरा या खतौनी में आवश्यक हो जाती है,

तो यह इस सवाल को नियंत्रित करेगा कि जिस भूमि से प्रविष्टि संबंधित है, उस पर कब्जा करने या बनाए रखने का हकदार कौन है।

यह अपीलार्थियों के विद्वान वकील द्वारा प्रस्तुत किया गया था कि यदि प्रविष्टि सही नहीं थी, इसे कानून के अनुसार की गई प्रविष्टि के रूप में बिल्कुल भी नहीं माना जा सकता था और गलत प्रविष्टि के आधार पर भूमि पर कब्जा करने या बनाए रखने का अधिकार निर्धारित नहीं किया जा सकता था। उन्होंने बचन और एक अन्य कंकड़ और अन्य, [1973] 1 एससीआर 727 मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया। उस निर्णय में खसरा या खतौनी में प्रविष्टियों की प्रकृति पर चर्चा की गई है और यह भी चर्चा की गई है कि यह प्रविष्टि कैसे की जानी चाहिए। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जो प्रविष्टियाँ वास्तविक नहीं हैं, वे आदिवासी अधिकारों को प्रदान नहीं कर सकती हैं। यह देखा गया है कि उक्त अधिनियम की धारा 20 (बी) के तहत एक प्रविष्टि, किसी व्यक्ति को आदिवासी अधिकार प्राप्त करने में सक्षम बनाने के लिए, प्रावधान के तहत एक प्रविष्टि होनी चाहिए।

कानून और प्रविष्टियाँ, जो वास्तविक नहीं हैं, आदिवासी अधिकारों को प्रदान नहीं कर सकती हैं। उस फैसले में यह कहा गया है कि उच्च न्यायालय गलत था जब उसने कहा कि हालांकि प्रविष्टि गलत थी, लेकिन इसे काल्पनिक नहीं कहा जा सकता था। हालाँकि, उस अवलोकन को निम्नलिखित के संदर्भ में समझना होगा, अर्थात्, एक प्रविष्टि जिसे दुर्भावना या शत्रुता के कारण अभिलेखों में ठीक से शामिल किया गया है, न केवल प्रामाणिकता से वंचित है, बल्कि बिना किसी वैध आधार के पूरी तरह से बेकार हो जाता है। हमारे विचार में, यह निर्णय यह निर्धारित नहीं करता है कि सभी गलत प्रविष्टियां काल्पनिक हैं, लेकिन केवल यह निर्धारित करता है कि गलत प्रविष्टि या गलत प्रविष्टि जो दुर्भावना या शत्रुता के कारण की गई है, उक्त अधिनियम की धारा 20 (बी) के तहत कोई अधिकार प्रदान नहीं कर सकती है। इस निर्णय को विश्व विजय भारती

बनाम फखरूल हसन और अन्य, [1976] पूरक एस. सी. आर. 519 में इस न्यायालय के बाद के फैसले से स्पष्ट किया गया है।, जहाँ यह निम्नानुसार आयोजित किया गया हैः

> "यह सच है कि राजस्व अभिलेख में प्रविष्टियाँ को आम तौर पर, उनके बाहरी तौर पर ही देखा जाना चाहिए और अदालतों में उनकी शुद्धता के बारे में अपीलीय जांच शुरू नहीं करनी चाहिए। लेकिन शुद्धता का उपधारणा केवल वास्तविक व सही प्रविष्ठियों पर ही लागू हो सकती है, जाली या धोखाधड़ी वाली प्रविष्टियों के लिए नहीं। यह विभेद ठीक हो सकता है लेकिन वास्तविक है। भेद यह है कि राजस्व रिकार्ड में किसी प्रविष्टि की शुद्धता को चुनौती नहीं दे सकता है बल्कि केवल इस बात पर आपत्ति कर सकता है कि इसे छलपूर्वक या गुप्त रूप से बनाया गया था। धोखाधड़ी और जालसाजी एक दस्तावेज़ को उसके सभी कानूनी प्रभाव से दूर कर सकती है और कब्जे के आधार पर स्वामित्व के दावे को समाप्त कर सकती है।"

वर्तमान मामले पर आते है, हालांकि अतिरिक्त आयुक्त ने माना है कि प्रविष्टि काल्पनिक थी, ऐसा लगता है कि यह निष्कर्ष केवल इस आधार पर आया है कि वली मोहम्मद विचाराधीन फसली वर्ष में कब्जे में थे, जिसके परिणामस्वरूप खसरा या खतौनी में प्रविष्टि में राम कुमार को रहने वाले के रूप में दिखाया गया था। यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि उक्त प्रविष्टि काल्पनिक थी या छलपूर्वक की गई थी या वली मोहम्मद के प्रति दुर्भावना या शत्रुता के कारण गलत तरीके से पेश की गई थी। इन परिस्थितियों में, संभव है कि प्रविष्ठि सही नहीं हो सकती है, लेकिन इसे काल्पनिक या गैर-वास्तविक नहीं कहा जा सकता है। केवल इसलिए कि प्रविष्टि गलत हो सकती है, इससे इस प्रश्न के निर्धारण में कोई फर्क नहीं पड़ेगा कि उक्त अधिनियम की धारा

20 (बी) के प्रावधानों के तहत कौन भूमि का आदिवासी घोषित होने का हकदार है। हम उच्च न्यायालय के निष्कर्ष और तर्क से सहमत हैं।

नतीजतन, अपील विफल हो जाती है और लागत के साथ खारिज कर दी जाती है।

वाई. लाल

याचिका खारिज कर दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।